कार्ल मार्क्स के दो सौवें जन्मदिन (5 मई, 1818) पर हावर्ड फ़ास्ट का विशेष लेख

मई दिवस 1947 : यह एक गाथा है पर आप सबके लिए नहीं!

हावर्ड फास्ट

वर्ष 1947 के मई दिवस के अवसर पर लिखा गया प्रसिद्ध अमेरिकी उपन्यासकार हावर्ड फास्ट का यह लेख मई दिवस की गौरवशाली परम्पराओं की याद एक ऐसे समय में करता है जब अमेरिका में लम्बे संघर्षों से हासिल मज़दूर अधिकारों पर हमला बोला जा रहा था। आज भारत में देशी-विदेशी पूँजी की मिली-जुली ताक़त ने श्रम पर ज़बरदस्त हमला बोल दिया है। ऐसे में यह लेख आज भारत के मज़दूर वर्ग के लिए लिखा गया महसूस होता है, और मई दिवस की यह गाथा उत्साह और जोश से भर देती है। इसका अनुवाद 1946 के नौसेना विद्रोह में शामिल रहे सुरेन्द्र कुमार ने किया था।

यह गाथा आपमें से बस उनके लिए है जो ज़िन्दगी से प्यार करते हैं और जो आज़ाद इन्सानों की तरह जीना चाहते हैं। आप सबके लिए नहीं, आपमें से बस उनके लिए, जो हर उस चीज़ से नफ़रत करते हैं, जो अन्यायपूर्ण और ग़लत है, जो भूख, बदहाली और बेघर होने में कोई कल्याणकारी तत्व नहीं देखते। आपमें से उनके लिए, जिन्हें वह समय याद है, जब एक करोड़ बीस लाख बेरोज़गार सूनी आँखों से भविष्य की ओर ताक रहे थे।

यह एक गाथा है, उनके लिए, जिन्होंने भूख से तड़पते बच्चे या पीड़ा से छटपटाते इन्सान की मन्द पड़ती कराह सुनी है। उनके लिए, जिन्होंने बन्दूक़ों की गड़गड़ाहट सुनी है और टारपीडो के दागे जाने की आवाज़ पर कान लगाये हों। उनके लिए, जिन्होंने फासिज़्म द्वारा बिछायी गयी लाशों का अम्बार देखा है। उनके लिए, जिन्होंने युद्ध के दानव की मांसपेशियों को मज़बूत बनाया था, और बदले में जिन्हें एटमी मौत का ख़ौफ़ दिया गया था।

यह गाथा उनके लिए है। उन माताओं के लिए जो अपने बच्चों को मरता नहीं बल्कि ज़िन्दा देखना चाहती हैं। उन मेहनतकशों के लिए जो जानते हैं कि फासिस्ट सबसे पहले मज़दूर यूनियनों को ही तोड़ते हैं। उन भूतपूर्व सैनिकों के लिए, जिन्हें मालूम है कि जो लोग युद्धों को जन्म देते हैं, वे ख़ुद लड़ाई में नहीं उतरते। उन छात्रों के लिए, जो जानते हैं कि आज़ादी और ज्ञान को अलग-अलग नहीं किया जा सकता। उन बुद्धिजीवियों के लिए, जिनकी मौत निश्चित है यदि फासिज़्म ज़िन्दा रहता है। उन नीग्रो लोगों के लिए, जो जानते हैं कि जिम-क्रो' और प्रतिक्रियावाद दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। उन यहूदियों के लिए जिन्होंने हिटलर से सीखा कि यहूदी विरोध की भावना असल में क्या होती है। और यह गाथा बच्चों के लिए, सारे बच्चों के लिए, हर रंग, हर नस्ल, हर आस्था-धर्म के बच्चों के लिए उन सबके लिए लिखी गयी है, ताकि उनका भविष्य जीवन से भरपूर हो, मौत से नहीं।

यह गाथा है जनता की शक्ति की, उनके अपने उस दिन की, जिसे उन्होंने स्वयं चुना था और जिस दिन वे अपनी एकता और शक्ति का पर्व मनाते हैं। यह वह दिन है, जो अमेरिकी मज़दूर वर्ग का संसार को उपहार था और जिस पर हमें हमेशा फ़ख़्र रहेगा।

उन्होंने आपको यह नहीं बताया

स्कूल में आपने इतिहास की जो पुस्तकें पढ़ी होंगी उनमें उन्होंने यह नहीं बताया होगा कि "मई दिवस" की शुरुआत कैसे हुई थी। लेकिन हमारे अतीत में बहुत कुछ उदात्त था और साहस से भरपूर था, जिसे इतिहास के पन्नों से बहुत सावधानी से मिटा दिया गया है। कहा जाता है कि "मई दिवस" विदेशी परिघटना है, लेकिन जिन लोगों ने 1886 में शिकागो में पहले मई दिवस की रचना की थी, उनके लिए इसमें कुछ भी बाहर का नहीं था। उन्होंने इसे देसी सूत से बुना था। उजरती मज़दूरी की व्यवस्था इन्सानों का जो हश्र करती है उसके प्रति उनका गुस्सा किसी बाहरी स्रोत से नहीं आया था।

पहला "मई दिवस" 1886 में शिकागो नगर में मनाया गया। उसकी भी एक पूर्वपीठिका थी, जिसके दृश्यों को याद कर लेना अनुपयुक्त नहीं होगा। 1886 के एक दशक पहले से अमेरिकी मज़दूर वर्ग जन्म और विकास की प्रक्रिया से गुज़र रहा था। यह नया देश जो थोड़े-से समय में एक महासागर से दूसरे महासागर तक फैल गया था, उसने शहर पर शहर बनाये, मैदानों पर रेलों का जाल बिछा दिया, घने जंगलों को काटकर साफ़ किया, और अब वह विश्व का पहला औद्योगिक देश बनने जा रहा था। और ऐसा करते हुए वह उन लोगों पर ही टूट पड़ा जिन्होंने अपनी मेहनत से यह सब सम्भव बनाया था, वह सबकुछ बनाया था जिसे अमेरिका कहा जाता था, और उनके जीवन की एक-एक बूँद निचोड़ ली।

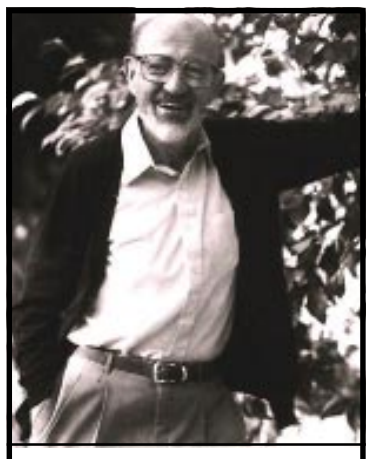

हावर्ड फास्ट

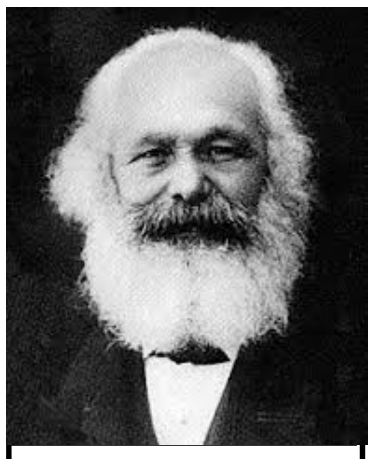

कार्ल मार्क्स

स्त्री-पुरुष और यहाँ तक कि बच्चे भी अमेरिका की नयी फ़ैक्टरियों में हाड़तोड़ मेहनत करते थे। बारह घण्टे का काम का दिन आम चलन था, चौदह घण्टे का काम भी बहुत असामान्य नहीं था, और कई जगहों पर बच्चे भी एक-एक दिन में सोलह और अठारह घण्टे तक काम करते थे। मज़दूरी बहुत ही कम हुआ करती थी, वह अक्सर दो जून रोटी के लिए भी नाकाफ़ी होती थी, और बार-बार आने वाली मन्दी की कड़वी नियमितता के साथ बड़े पैमाने पर बेरोज़गारी के दौर आने लगे। सरकारी निषेधाज्ञाओं के ज़रिये शासन रोज़मर्रा की बात थी।

परन्तु अमेरिकी मज़दूर वर्ग रीढ़विहीन नहीं था। उसने यह स्थिति स्वीकार नहीं की, उसे किस्मत में बदी बात मानकर सहन नहीं किया। उसने मुक़ाबला किया और पूरी दुनिया के मेहनतकशों को जुझारूपन का पाठ पढ़ाया। ऐसा जुझारूपन जिसकी आज भी कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलती।

1877 में वेस्ट वर्जीनिया प्रदेश के मार्टिन्सबर्ग में रेल-हड़ताल शुरू हुई। हथियारबन्द पुलिस बुला ली गयी और मज़दूरों के साथ एक छोटी लड़ाई के बाद हड़ताल कुचल दी गयी। लेकिन केवल स्थानीय तौर पर; जो चिनगारी भड़की थी, वह ज्वाला बन गयी। "बाल्टीमोर और ओहायो" रेलमार्ग बन्द हुआ, फिर पेन्सिलवेनिया बन्द हुआ, और फिर एक के बाद दूसरी रेल कम्पनियों का चक्का जाम होता चला गया। और आख़िरकार एक छोटा-सा स्थानीय उभार इतिहास में उस समय तक ज्ञात सबसे बड़ी रेल हड़ताल बन गया। दूसरे उद्योग भी उसमें शामिल हो गये और कई इलाक़ों में यह रेल-हड़ताल एक आम हड़ताल में तब्दील हो गयी।

पहली बार सरकार और साथ ही मालिकों को भी पता चला कि मज़दूर की ताक़त क्या हो सकती है। उन्होंने पुलिस और फ़ौज बुलायी; जगह-जगह जासूस तैनात किये गये। कई जगहों पर जमकर लड़ाइयाँ हुईं। सेण्ट लुई में नागरिक प्रशासन के अधिकारियों ने हथियार डाल दिये और नगर मज़दूर वर्ग के हवाले कर दिया। उन लोमहर्षक उभारों में कितने हताहत हुए होंगे, उन्हें आज कोई नहीं गिन सकता। परन्तु हताहतों की संख्या बहुत बड़ी रही होगी, इस पर कोई भी, जिसने तथ्यों का अध्ययन किया है, सन्देह नहीं कर सकता।

हड़ताल आख़िरकार टूट गयी। परन्तु अमेरिकी मज़दूरों ने अपनी भुजाएँ फैला दी थीं और उनमें नयी जागरूकता का संचार हो रहा था। प्रसव-वेदना समाप्त हो चुकी थी और अब वह वयस्क होने लगा था।

अगला दशक संघर्ष का दौर था, आरम्भ में अस्तित्व का संघर्ष और फिर संगठन बनाने का संघर्ष। सरकार ने 1877 को आसानी से नहीं भुलाया; अमेरिका के अनेक शहरों में शस्त्रागारों का निर्माण होने लगा; मुख्य सड़कें चौड़ी की जाने लगीं, ताकि "गैटलिंग" मशीनगनें उन्हें अपने नियन्त्रण में रख सकें। एक मज़दूर-विरोधी प्राइवेट पुलिस संगठन "पिंकरटन एजेंसी" का गठन किया गया, और मज़दूरों के ख़िलाफ़ उठाये गये क़दम अधिक से अधिक दमनकारी होते चले गये। वैसे तो अमेरीका में दुष्प्रचार के तौर पर "लाल ख़तरे" शब्द का इस्तेमाल 1830 के दशक से ही होता चला आया था, लेकिन उसे अब एक ऐसे डरावने हौवे का रूप दे दिया गया, जो आज प्रत्यक्ष तौर पर हमारे सामने है।

परन्तु मज़दूरों ने इसे चुपचाप स्वीकार नहीं किया। उन्होंने भी अपने भूमिगत संगठन बनाये। भूमिगत रूप में जन्मे संगठन नाइट्स ऑफ़ लेबर के सदस्यों की संख्या 1886 तक 7,00,000 से ज़्यादा हो गयी थी। नवजात अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर का मज़दूर यूनियनों की स्वैच्छिक संस्था के रूप में गठन किया गया, समाजवाद जिसके लक्ष्यों में एक लक्ष्य था। यह संस्था बहुत तेज़ रफ़्तार से विकसित होती चली गयी। यह वर्ग-सचेत और जुझारू थी और अपनी माँगों पर टस-से-मस न होने वाली थी। एक नया नारा बुलन्द हुआ। एक नयी, दो टूक, सुस्पष्ट माँग पेश की गयी = "आठ घण्टे काम, आठ घण्टे आराम, आठ घण्टे मनोरंजन"।

1886 तक अमेरिकी मज़दूर नौजवान योद्धा बन चुका था, जो अपनी ताक़त परखने के लिए मौक़े की तलाश कर रहा था। उसका मुक़ाबला करने के लिए सरकारी शस्त्रागारों का निर्माण किया गया था, पर वे नाकाफ़ी थे। "पिंकरटनों" का प्राइवेट पुलिस दल भी काफ़ी नहीं था, न ही गैटलिंग मशीनगनें। संगठित मज़दूर अपने क़दम बढ़ा रहा था, और उसका एकमात्र जुझारू नारा देश और यहाँ तक कि धरती के आर-पार गूँज रहा था = "एक दिन में आठ घण्टे का काम — इससे ज़रा भी ज़्यादा नहीं!"

1886 के उस ज़माने में, शिकागो जुझारू, वामपक्षी मज़दूर आन्दोलन का केन्द्र था। यहीं शिकागो में संयुक्त मज़दूर प्रदर्शन के विचार ने जन्म लिया, एक दिन जो उनका दिन हो किसी और का नहीं, एक दिन जब वे अपने औज़ार रख देंगे और कन्धे से कन्धा मिलाकर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करेंगे।

पहली मई को मज़दूर वर्ग के दिवस, जनता के दिवस के रूप में चुना गया। प्रदर्शन से काफ़ी पहले ही "आठ घण्टा संघ" नाम की एक संस्था गठित की गयी। यह आठ घण्टा संघ एक संयुक्त मोर्चा था, जिसमें अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर, नाइट्स ऑफ़ लेबर और समाजवादी मज़दूर पार्टी शामिल थे। शिकागो की सेण्ट्रल लेबर यूनियन भी, जिसमें सबसे अधिक जुझारू वामपक्षी यूनियनें शामिल थीं, इससे जुड़ी थी।

शिकागो से हुई शुरुआत कोई मामूली बात नहीं थी। "मई दिवस" की पूर्ववेला में एकजुटता के लिए आयोजित सभा में 25,000 मज़दूर उपस्थित हुए। और जब "मई दिवस" आया, तो उसमें भाग लेने के लिए शिकागो के हज़ारों मज़दूर अपने औज़ार छोड़कर फ़ैक्टरियों से निकलकर मार्च करते हुए जनसभाओं में शामिल होने पहुँचने लगे। और उस समय भी, जबकि "मई दिवस" का आरम्भ ही हुआ था, मध्य वर्ग के हज़ारों लोग मज़दूरों की क़तारों में शामिल हुए और समर्थन का यह स्वरूप अमेरिका के कई अन्य शहरों में भी दोहराया गया।

और आज की तरह उस वक़्त भी बड़े पूँजीपतियों ने जवाबी हमला किया — रक्तपात, आतंक, न्यायिक हत्या को ज़रिया बनाया गया। दो दिन बाद मैकार्मिक रीपर कारख़ाने में, जहाँ हड़ताल चल रही थी, एक आम सभा पर पुलिस ने हमला किया। उसमें छह मज़दूरों की हत्या हुई। अगले दिन इस जघन्य कार्रवाई के विरुद्ध हे मार्केट चौक पर जब मज़दूरों ने प्रदर्शन किया, तो पुलिस ने उन पर फिर हमला किया। कहीं से एक बम फेंका गया, जिसके फटने से कई मज़दूर और पुलिसवाले मारे गये। इस बात का कभी पता नहीं चल पाया कि बम किसने फेंका था, इसके बावजूद चार अमेरिकी मज़दूर नेताओं को फाँसी दे दी गयी, उस अपराध के लिए, जो उन्होंने कभी किया ही नहीं था और जिसके लिए वे निर्दोष सिद्ध हो चुके थे।

इन वीर शहीदों में से एक, ऑगस्ट स्पाइस, ने फाँसी के तख़्ते से घोषणा की=

"एक वक़्त आयेगा, जब हमारी ख़ामोशी उन आवाज़ों से ज़्यादा ताक़तवर सिद्ध होगी, जिनका तुम आज गला घोंट रहे हो। "समय ने इन शब्दों की सच्चाई को प्रमाणित कर दिया है। शिकागो ने दुनिया को "मई दिवस" दिया, और इस बासठवें मई दिवस पर करोड़ों की संख्या में एकत्र दुनियाभर के लोग ऑगस्ट स्पाइस की भविष्यवाणी को सच साबित कर रहे हैं।

शिकागो में हुए प्रदर्शन के तीन वर्ष बाद संसारभर के मज़दूर नेता बास्तीय क़िले पर धावे (जिसके साथ फ़्रांसीसी क्रान्ति की शुरुआत हुई) की सौवीं सालगिरह मनाने के लिए पेरिस में जमा हुए। एक-एक करके, अनेक देशों के नेताओं ने भाषण दिया।

आख़िर में अमेरीकियों के बोलने की बारी आयी। जो मज़दूर हमारे मज़दूर वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रहा था, खड़ा हुआ और बिल्कुल सरल और दो टूक भाषा में उसने आठ घण्टे के कार्यदिवस के संघर्ष की कहानी बयान की जिसकी परिणति 1886 में हे मार्केट का शर्मनाक काण्ड था।

उसने हिंसा, ख़ूँरेज़ी, बहादुरी का जो सजीव चित्र पेश किया, उसे सम्मेलन में आये प्रतिनिधि वर्षों तक नहीं भूल सके। उसने बताया कि पार्सन्स ने कैसे मृत्यु का वरण किया था, जबकि उससे कहा गया था कि अगर वह अपने साथियों से ग़द्दारी करे और क्षमा माँगे तो उसे फाँसी नहीं दी जायेगी। उसने श्रोताओं को बताया कि कैसे दस आयरिश ख़ान मज़दूरों को पेनसिल्वेनिया में इसलिए फाँसी दी गयी थी कि उन्होंने मज़दूरों के संगठित होने के अधिकार के लिए संघर्ष किया था। उसने उन वास्तविक लड़ाइयों के बारे में बताया जो मज़दूरों ने हथियारबन्द "पिंकरटनों" से लड़ी थीं, और उसने और भी बहुत कुछ बताया। जब उसने अपना भाषण समाप्त किया तो पेरिस कांग्रेस ने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

"कांग्रेस फ़ैसला करती है कि राज्यों के अधिकारियों से कार्य दिवस को क़ानूनी ढंग से घटाकर आठ घण्टे करने की माँग करने के लिए और साथ ही पेरिस कांग्रेस के अन्य निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिए समस्त देशों और नगरों से मेहनतकश अवाम एक निर्धारित दिन एक महान अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन संगठित करेंगे। चूँकि अमेरिकन फ़ेडरेशन ऑफ़ लेबर पहली मई 1890 को ऐसा ही प्रदर्शन करने का फ़ैसला कर चुका है, "अत= यह दिन अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शन के लिए स्वीकार किया जाता है। विभिन्न देशों के मज़दूरों को प्रत्येक देश में विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार यह प्रदर्शन अवश्य आयोजित करना चाहिए।"

तो इस निश्चय पर अमल किया गया और "मई दिवस" पूरे संसार की धरोहर बन गया। अच्छी चीज़ें किसी एक जनता या राष्ट्र की सम्पत्ति नहीं होतीं। एक के बाद दूसरे देश के मज़दूर ज्यों-ज्यों मई दिवस को अपने जीवन, अपने संघर्षों, अपनी आशाओं का अविभाज्य अंग बनाते गये, वे मानकर चलने लगे कि यह दिन उनका है और यह भी सही है, क्योंकि पृथ्वी पर मौजूद समस्त राष्ट्रों के बरक्स हम राष्ट्रों का राष्ट्र हैं, सभी लोगों और सभी संस्कृतियों का समुच्चय हैं।

और आज के मई दिवस की क्या विशेषता है पिछले मई दिवस गत आधी शताब्दी के संघर्षों को प्रकाश-स्तम्भों की भाँति आलोकित करते हैं। इस शताब्दी के आरम्भ में मई दिवस के ही दिन मज़दूर वर्ग ने परायी धरती को हड़पने की साम्राज्यवादी कार्रवाइयों की सबसे पहले भर्त्सना की थी। मई दिवस के ही अवसर पर मज़दूरों ने नवजात समाजवादी राज्य सोवियत संघ का समर्थन करने के लिए आवाज़ बुलन्द की थी। मई दिवस के अवसर पर ही हमने अपनी भरपूर शक्ति से असंगठितों के संगठन का समारोह मनाया था।

लेकिन बीते किसी भी मई दिवस पर कभी ऐसे अनिष्टसूचक लेकिन साथ ही इतने आशा भरे भविष्य-संकेत नहीं दिखायी दिये थे, जितना कि आज के मई दिवस पर हो रहा है। पहले कभी हमारे पास जीतने को इतना कुछ नहीं था, पहले कभी हमारे खोने को इतना कुछ नहीं था।

जनता के लिए अपनी बात कह पाना आसान नहीं है। लोगों के पास अख़बार या मंच नहीं है, और न ही सरकार में शामिल हमारे चुने गये प्रतिनिधियों की बहुसंख्या जनता की सेवा करती है। रेडियो जनता का नहीं है और न फ़िल्म बनाने वाली मशीनरी उसकी है। बड़े कारोबारों की इज़ारेदारी अच्छी तरह स्थापित हो चुकी है, काफ़ी अच्छी तरह — लेकिन लोगों पर तो किसी का एकाधिकार नहीं है।

जनता की ताक़त उसकी अपनी ताक़त है। मई दिवस उसका अपना दिवस है, अपनी यह ताक़त प्रदर्शित करने का दिन है। क़दम से क़दम मिलाकर बढ़ते लाखों लोगों की क़तारों के बीच अलग से एक आवाज़ बुलन्द हो रही है। यह वक़्त है कि वे लोग, जो अमेरिका को फासिज़्म के हवाले करने पर आमादा हैं, इस आवाज़ को सुनें।

उन्हें यह बताने का वक़्त है कि वास्तविक मज़दूरी लगभग पचास प्रतिशत घट गयी है, कि घरों में अनाज के कनस्तर ख़ाली हैं, कि यहाँ अमेरिका में अधिकाधिक लोग भूख की चपेट में आ रहे हैं।

यह वक़्त है श्रम विरोधी क़ानूनों के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द करने का। दो सौ से ज़्यादा श्रम विरोधी क़ानूनों के विधेयक कांग्रेस के समक्ष विचाराधीन आ रहे हैं, जो यक़ीनन मज़दूरों को उसी तरह तोड़ डालने के रास्ते खोल देंगे, जिस तरह हिटलर के नाज़ीवाद ने जर्मन मज़दूरों को तोड़ डाला था।

संगठित अमेरिकी मज़दूरों के लिए आँख खोलकर यह तथ्य देखने का वक़्त आ गया है कि यह मज़दूरों की एकता क़ायम करने की आख़िरी घड़ी है वरना बहुत देर हो जायेगी और एकताबद्ध करने के लिए संगठित मज़दूर रहेंगे ही नहीं।

आप यहाँ पढ़ रहे हैं गाथा, उन लोगों की जो बारह से पन्द्रह घण्टे रोज़ काम करते थे, आप पढ़ रहे हैं गाथा, उस सरकार की, जो आतंक और निषेधाज्ञाओं के बल पर चल रही है।

यह है उन लोगों का लक्ष्य, जो आज श्रमिकों को चकनाचूर करना चाहते हैं। वे अपने "अच्छे" दिनों को फिर वापस लाना चाहते हैं। इसका सबूत यूनाइटेड माइन के खनिक मज़दूरों के मामले में सुप्रीम कोर्ट का फ़ैसला है। आप जब मई दिवस के अवसर पर मार्च करेंगे तो आप उन्हें अपना जवाब देंगे।

वक़्त आ गया है यह समझने का कि "अमेरिकी साम्राज्य" के आह्वान का, यूनान, तुर्की और चीन में हस्तक्षेप से क्या रिश्ता है! साम्राज्य की क़ीमत क्या है? जो दुनिया पर राज कर दुनिया को "बचाने" के लिए चीख़ रहे हैं, उन्हें दूसरे साम्राज्यों के अंजाम को याद करना चाहिए। उन्हें यह आँकना चाहिए कि ज़िन्दगी और धन दोनों अर्थों में युद्ध की क्या क़ीमत होती है।

वक़्त आ गया है यह देखने के लिए जाग उठने का कि कम्युनिस्टों के पीछे शिकारी कुत्ते छोड़े जाने का क्या अर्थ है? क्या एक भी ऐसा कोई देश है, जहाँ कम्युनिस्ट पार्टी को ग़ैरक़ानूनी घोषित किया जाना फासिज़्म की पूर्वपीठिका न रहा हो? क्या ऐसा कोई एक भी देश है, जहाँ कम्युनिस्टों को रास्ते से हटाते ही मज़दूर यूनियनों को चकनाचूर न कर दिया गया हो?

वक़्त आ गया है कि हम हालात की क़ीमत को समझें। कम्युनिस्टों को प्रताड़ित करने के अभियान की क़ीमत था संगठित मज़दूरों को ठिकाने लगाना — उसकी क़ीमत है फासिज़्म। और आज ऐसा कौन है, जो इस बात को स्वीकार नहीं करेगा कि फासिज़्म की क़ीमत मौत है?